मानव मन के गहरे अँधेरे कोनों की पड़ताल करता उपन्यास

'दृश्य से अदृश्य का सफर'

पंकज सुबीर

सुधा ओम ढींगरा

हिन्दी कथा संसार का दायरा वैसे तो दिनों–दिन विस्तृत होता जा रहा है, फिर भी अभी कई विषय ऐसे हैं, जिन पर बहुत ज़्यादा काम अभी तक सामने नहीं आया है। जबकि; इन्हीं विषयों पर विदेशों में बहुत काम हुआ है और अभी भी हो रहा है। नई सदी में हिन्दी कथा साहित्य ने कई नए विषयों की जमीनें तोड़ कर वहाँ कहानियों और उपन्यासों की फसल उगाई है। कई ऐसे विषय जिन पर पहले बहुत कम बात की जाती थीं, गिने–चुने उदाहरण जिनके मिलते थे, अब उन विषयों पर बहुत काम हो रहा है और लगभग अछूत समझे जाने वाले उन विषयों को नई सदी में सामने आए लेखक ख़ूब उठा रहे हैं। नई सदी का साहित्य एकदम नए नज़रिये का साहित्य है, जिसमें कहीं किसी भी विषय से परहेज़ करने वाली बात दिखाई नहीं देती है। शोध करके लिखने की प्रवृत्ति भी इधर काफी दिखाई देती है। क्योंकि; इंटरनेट के कारण शोध कार्य में कुछ आसानी हो गई है। इन दिनों जो उपन्यास सामने आ रहे हैं, वह बहुत अध्ययन और शोध से उपजे हुए होते हैं, उनके पीछे किया गया परिश्रम साफ दिखाई देता है।

सुधा ओम ढींगरा का अधिकांश महत्त्वपूर्ण लेखन नई सदी में ही सामने आया है तथा उनकी महत्त्वपूर्ण तथा चर्चित किताबें भी नई सदी में ही सामने आई हैं। इसीलिए उनको नई सदी में सामने आई कथा–पीढ़ी के साथ ही रेखांकित करना होगा। हिन्दी में कथा–समय से ज़्यादा वरिष्ठ–कनिष्ठ के दायरों में काम होता है, जो ठीक नहीं है। असल में एक कथा–समय को ही रेखांकित किया जाना चाहिए। उस कथा–समय में सक्रिय कौन था, कौन अपने समय के परिवर्तनों पर नज़र रखे हुए था, तथा उसकी रचनाओं में उस परिवर्तन की आहट महसूस हो रही थी या नहीं; यह सब देखा जाना बहुत जरूरी है। कई सारे वरिष्ठ लेखक ऐसे हैं, जिनकी शैली, शिल्प तथा विषयों में नवीनता दिखाई दे रही है, जबकि कई युवा लेखक ऐसे हैं, जो पारंपरिक ढर्रे पर ही चल रहे हैं, ऐसे में आप नए कथा–समय की बात करते समय किसको उसमें शामिल करोगे। उस लेखक को जो नया है या उस लेखक को जिसका लेखन नया है?

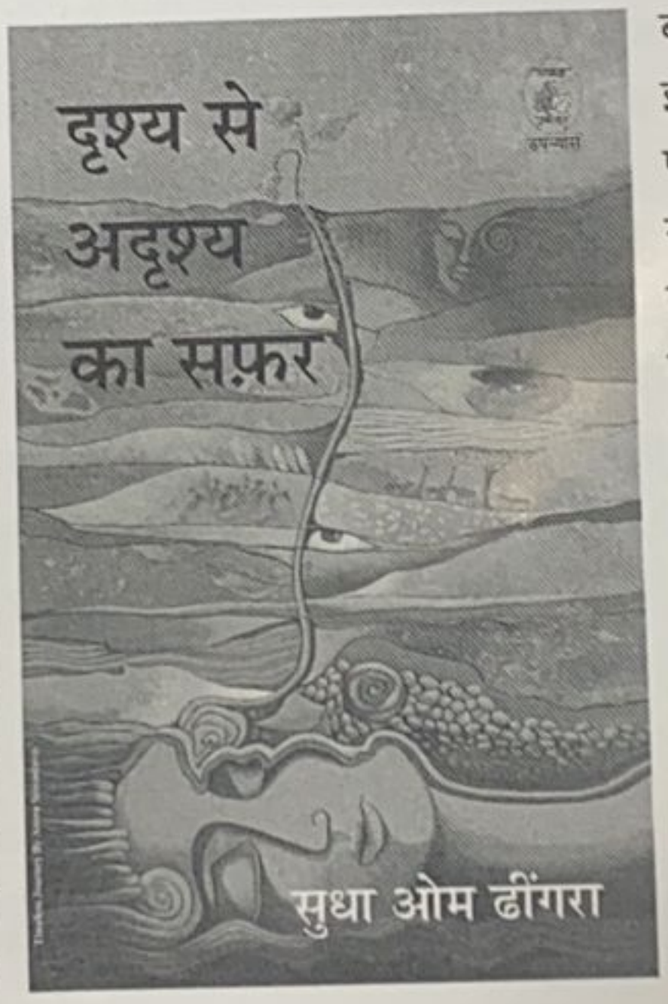

सुधा ओम ढींगरा का यह दूसरा उपन्यास है जो सामने आया है। इससे पहले उनका उपन्यास 'नक़्क़ाशीदार केबिनेट' लगभग पाँच साले पहले आया था, और पाठकों तथा आलोचकों दोनों ने इसे ख़ूब सराहा था। उस उपन्यास की कहानी भारत और अमेरिका के बीच आवाजाही करती रहती थी। एक तूफान को प्रतीक बना कर सुधा ओम ढींगरा ने कई सारे तूफानों की चर्चा उस उपन्यास में की थी। 'दृश्य से अदृश्य का सफर' सुधा ओम ढींगरा का नया उपन्यास है, जो भारत में कोरोना की दूसरी लहर की भयावहता के दौरान सामने आया है। यह उपन्यास एक ऐसे विषय पर आधारित है, जिस पर हिन्दी में बहुत कम काम हुआ है। कुछेक उपन्यास ही इस विषय पर दिखाई देते हैं। मनोविज्ञान पर तो बहुत काम दिखाई देता है, लेकिन मनोवैज्ञानिक समस्याओं पर बहुत कम ही काम इधर दिखता है। यदि दिखता भी है तो वह इतना कठिन और जटिल है कि हिन्दी के पाठक के लिए उसे समझना भी एक समस्या हो जाता है। यह विषय इतना जटिल है कि इस पर लिखते समय कठिन हो जाने की समस्या से पार पाना मुश्किल हो जाता है। लेकिन 'दृश्य से अदृश्य का सफर' एक जटिल विषय पर सरलता से लिखा गया उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने मनोवैज्ञानिक समस्या को विषय

वही नाम से बुलाती हैं डॉ. लता भार्गव और दूसरी भारतीय अभिनेत्री सायरा बानो से मिलती–जुलती शक्ल की है इसलिए उसे सायरा नाम मिला। तीनों कहानियाँ महिलाओं की ही हैं। असल में सभ्यता के विकास के क्रम में सबसे ज़्यादा तनाव महिलाओं के ही हिस्से में आया है। जैसे–जैसे यह विकास का क्रम आगे बढ़ रहा है, वैसे–वैसे यह तनाव भी बढ़ रहा है। इसलिए मनोवैज्ञानिक समस्याओं का सामना भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं को ही अधिक करना पड़ता है। बल्कि यह कहा जाए तो भी कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि महिलाओं की समस्याओं के मूल में कहीं न कहीं पुरुष ही होता है। कम से कम इन तीन कहानियों से गुँथे हुए इस उपन्यास को पढ़ने के बाद तो यही कहा जा सकता है। पुरुष को यह समस्या कैसे हो सकती है, वह तो स्वयं ही समस्या है।

सुधा ओम ढींगरा ने उपन्यास में कोरोना समय में चल रही कथा के साथ इन तीन कहानियों को गूँथा है। जो कहानी कोरोना समय में चल रही है, वह एक डॉक्टर परिवार की कथा है। परिवार में सभी सदस्य डॉक्टर हैं और सब अपने–अपने स्तर पर कोरोना के वॉरियर्स का कार्य कर रहे हैं। ऐसे में जब कहानी फ्लैशबैक से वापस वर्तमान में आती है, तो बहुत सारी नई सूचनाएँ, जानकारियाँ पाठकों को मिलती हैं। ऐसी सूचनाएँ जो बिलकुल नई हैं। लेकिन यह सूचनाएँ मुख्य कथा को बोझिल नहीं करतीं। कहीं ऐसा नहीं लगता है कि इनको कहानी में जबरन डाला गया है। यह सूचनाएँ बहुत सहजता से कहानी का हिस्सा बनते हुए आती रहती हैं। विदेश में बसे हुए चिकित्सकों के नज़रिये से कोरोना समय को देखना इस उपन्यास का एक और रोचक पहलू है। भारतीय चिकित्सा तंत्र और विदेश के चिकित्सा तंत्र में क्या अंतर है, उसे इस उपन्यास को पढ़कर समझा जा सकता है। बहुत सूक्ष्म दृष्टि से लेखक ने वहाँ के चिकित्सा तंत्र की पड़ताल की है। और वह सारी जानकारियाँ संवादों के माध्यम से पाठक तक पहुँचती हैं। किसी विषय पर शोध करना अच्छी बात है, लेकिन उसके बाद सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य होता है, उस शोध के परिणामों को कहानी में कैसे पिरोया जाए। कहानी को शोध–पत्र हो जाने से बचाने के लिए लेखक को यह सलीक़ा बहुत आवश्यक रूप से आना ही चाहिए। शोध से प्राप्त सूचनाओं को इस उपन्यास में सुधा ओम ढींगरा ने बहुत सलीक़े से कहानी में पिरोया है।

उपन्यास की एक विशेषता यह है कि भले ही तीन कहानियों के माध्यम से मनोविज्ञान की दुनिया की बात कही गई है, लेकिन यह तीनों कहानियाँ बिलकुल अलग–अलग कहानियाँ हैं। तीनों कहानियों में समस्या के मूल में अलग–अलग कारण हैं और इसी वजह से तीनों कहानियों में समस्या अलग–अलग रूप में सामने आती है। परिवार के ही सदस्यों द्वारा सामूहिक बलात्कार, एसिड अटैक तथा क्रूर एवं अत्याचारी पति यह तीन कारण तीन अलग–अलग कहानियों में हैं। तीनों का संत्रास इतना गहरा और भयावह है कि इसकी शिकार तीनों महिलाएँ मनोवैज्ञानिक समस्याओं से जूझने लगती हैं। और सामान्य स्तर पर नहीं बल्कि बहुत गंभीर स्तर पर। तीन अलग–अलग कहानियों में तीन बड़े कारणों को लेखक ने उठाया है। तीन कारण जो महिलाओं को पूरा जीवन किसी तूफान की तरह झकझोर कर रख देते हैं, और उसके बाद सामने आती हैं मनोवैज्ञानिक समस्याएँ। असल में यही वह बिन्दु है, जिस पर आकर कोरोना की कथा इन तीन महिलाओं की कहानी से एकाकार हो जाती है। जिस प्रकार इन महिलाओं के जीवन में झंझावात आता है, उसी प्रकार समूचे विश्व के जीवन में कोरोना नाम का झंझावात दस्तक देता है। और इसके बाद जिस प्रकार उन महिलाओं के जीवन में समस्याओं का प्रवेश होता है उसी प्रकार समूचे विश्व के लोगों के जीवन में समस्याओं को आगमन होता है। असल में लेखक ने बहुत गहरे उतर कर इस साम्य को स्थापित किया है। और कहीं न कहीं यह स्थापित करने की कोशिश की है कि कहीं भी, कुछ भी अकारण नहीं होता है, जो कुछ हो रहा है उसके पीछे कहीं न कहीं कुछ न कुछ कारण अवश्य होता है।

इस उपन्यास को तीन कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत मनोविज्ञान की समस्याओं के लिए नहीं पढ़ना चाहिए, इसको पढ़ना चाहिए उन समाधानों के लिए, जो तीनों कहानियों में डॉ. लता भार्गव के प्रयासों से सामने आते हैं। कम से कम भारत के पाठकों को तो इन समाधानों के बारे में पढ़ना ही चाहिए, क्योंकि भारत में ही मनोवैज्ञानिक सम्स्याओं को लेकर सबसे ज़्यादा भ्रांतियाँ हैं। भारत में ही इन समस्याओं के बारे में जाने क्या–क्या सोचा और कहा जाता है। डॉ. लता भार्गव जिस प्रकार इन तीनों केसिज पर काम करती हैं, इन तीनों में परिणाम तक पहुँचती हैं, वह बहुत रोचक और दिलचस्प है। इस प्रकार के मामले किस प्रकार हल किए जा सकते हैं, वह भी इस उपन्यास को पढ़ कर पता चलता है। वैसे तो तीनों ही प्रकरणों में समाधान वाला हिस्सा रोचक है, लेकिन तीसरा प्रकरण, जो अमेरिका में रह रही दक्षिण भारतीय महिला का प्रकरण है, उसमें डॉ. लता भार्गव द्वारा जिस प्रकार मामले को हल किया जाता है, वह बहुत दिलचस्प है। मनोवैज्ञानिक समस्या को कोई सायकॉलॉजिस्ट इस प्रकार भी हल करता है, यह उपन्यास को पढ़कर पाठक को ज्ञात होता है। असल में यह उपन्यास समाधान का उपन्यास है, समस्या का नहीं है, इसलिए इसे पढ़कर समाप्त कर लेने के बाद पाठक सकारात्मक रूप से बाहर आता है। सुप्रसिद्ध हिन्दी फिल्म 'ख़ामोशी' में वहीदा रहमान एक नर्स के रूप में राजेश खन्ना की देखभाल करते हुए स्वयं समस्या से उलझ जाती है। इस

उपन्यास को पढ़ते हुए डॉ. लता भार्गव में पाठक को इस फिल्म की नर्स राधा की कहानी दिखाई देने लगती है। मगर वास्तव में कहानी वैसी नहीं है।

उपन्यास की शैली सुधा ओम ढींगरा ने बहुत सहज और सरल रखी है। जब कहानी वर्तमान में होती है तो संवाद शैली से आगे बढ़ती है और जब फ्लैशबैक में होती है तो क़िस्सागोई की शैली में। लेखक दोनों ही शैलियों में सिद्धहस्त है इसलिए उपन्यास की पठनीयता इस आवाजाही में बरकरार रहती है। विशेषकर किस्सागोई में तो सुधा ओम ढींगरा बहुत कुशल हैं, इसलिए जब उपन्यास तीन बार फ्लैशबैक में जाता है, तो क़िस्सागोई शैली के चलते उपन्यास की रोचकता और बढ़ जाती है तीनों फ्लैशबैक पाठक की आँखों के सामने चलचित्र की तरह गुज़रते हैं। दृश्य दर दृश्य उपस्थित होते हुए। डॉली, सायरा और दक्षिण भारतीय महिला के स्कैच पाठक की आँखों के सामने बन जाते हैं। तीनों कहानियों को बहुत मेहनत से लेखक ने विजुअल माध्यम की तरह गढ़ा है। उपन्यास की भाषा को भी लेखक ने शैली की ही तरह बिलकुल सहज और सरल रखा है। आम बोलचाल की भाषा में संवाद गढ़े हैं, इस प्रकार कि पढ़ते हुए पाठक को अपने ही लगते हैं। जो चिकित्सकीय ब्यौरे हैं वह भी इस प्रकार हैं कि पाठक को आसानी से समझ आ जाते हैं। इस प्रकार का जटिल विषय उठाते समय इतनी सहज और सरल भाषा तथा शैली लेना बहुत आवश्यक है, जिससे कृति जटिलता का शिकार न होने पाए।

कुल मिलाकर यह उपन्यास 'दृश्य से अदृश्य का सफर' मानव मन के गहरे अँधेरे कोनों की पड़ताल की कहानी है। सुधा ओम ढींगरा ने कुछ नए पन्नों को हिन्दी पाठक के सामने खोलने का कार्य इस उपन्यास के माध्यम से किया है। यह भी संयोग है कि कोरोना की पहली लहर के बाद लिखा गया यह उपन्यास जब सामने आया, तब भारत दूसरी लहर की भयावहता से जूझ रहा था। हिन्दी में इस तरह के प्रयोग और होते रहें इसके लिए आवश्यक है कि इस तरह के प्रयोगों का स्वागत किया जाए। इस तरह की कृतियाँ जो एकरसता को तोड़ती हैं और कुछ नई दिशाओं की खिड़कियाँ खोलती हैं, इनके स्वागत करने से आने वाले समय में इस प्रकार के और प्रयोग सामने आएँगे। यह उपन्यास एक यात्रा है, उस अज्ञात की यात्रा, जो कुहासे में छिपा हुआ अज्ञात है। लेखक ने अपनी भाषा और शैली से इस यात्रा को दिलचस्प और रोचक बना दिया है।

पंकज सुबीर, सीहोर, (म.प्र.), मो. : 9977855399, ईमेल–subeerin@gmail.com, **सुधा ओम ढींगरा**, sudhadrishti@gmail.com

पुस्तक समीक्षा

अकाल में उत्सव : पूंजीवाद और सरकारी तंत्र का मारा एक भारतीय किसान

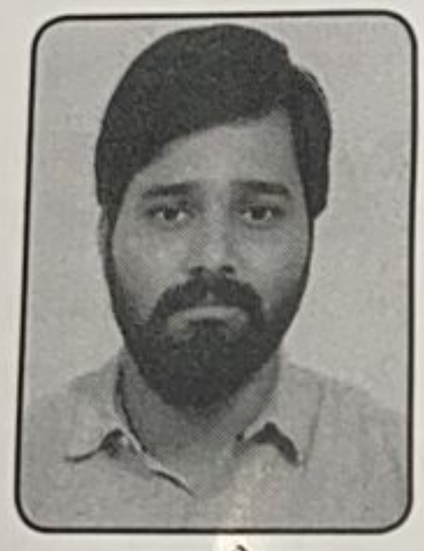

अतुल वैभव

पंकज सुबीर

वर्तमान दौर में साहित्यिक रचनाएँ तो बहुत लिखी जा रही हैं लेकिन उनमें से कुछ ही ऐसी होती हैं, जिन्हें पढ़ने के बाद पाठक समाज की उन सच्चाईयों से अवगत हो पाता है, जिन सच्चाईयों को जानते हुए भी वो अंजान बना रहता है। वाकई में रचना वही जिसे पढ़ कर पाठक सामाजिक यथार्थ से रुबरु हो साथ ही मन में कुछ यथार्थ प्रश्न आए और उन प्रश्नों के कुछ हद तक उत्तर भी। कुछ रचनाएँ ऐसी भी होती हैं, जिन्हें पढ़ने के बाद पाठक के मस्तिष्क में अनेक सवाल उथल–पुथल करने लगते हैं और उन सवालों का उत्तर खुद से ढूँढने की कोशिश भी करने लगता है। साहित्य सिर्फ पाठक का मनोरंजन ही नहीं करता है बल्कि समाज के यथार्थ से भी रूबरू कराता है। आज सोशल मीडिया के ज़माने में जब क्षणिक लेखकों और रचनाओं की बाढ़ सी आ रखी है, वैसे में सामाजिक मुद्दों को गंभीरता से अपनी लेखनी का विषय बनाकर समाज को सजग करने वाले गिने–चुने रचनाकार ही रह गए हैं। वर्तमान समय में सोशल मीडिया जैसे माध्यमों पर रोज सैकड़ों लेखक पैदा होते हैं और कुछ दिनों में ही वे गायब भी हो जाते हैं। सोशल मीडिया आज भले ही लोगों की अभिव्यक्ति का बड़ा माध्यम बन गया है परंतु यह लेखन से अधिक लेखक के प्रचार का माध्यम लगता है। अगर कहा जाए कि सोशल मीडिया पर रचना से अधिक रचनाकार का प्रचार होता है तो गलत नहीं होगा। वैसे वर्तमान कठिन समय में बहुत कम ऐसे रचनाकार हैं जो वाकई में अपने लिए नहीं बल्कि समाज के लिए लिखते हैं, उनमें से एक नाम है 'पंकज सुबीर' का है।

हिंदी कथा साहित्य में अपनी कलम की आवाज़ से समकालीन कथा जगत के पाठकों को चौकन्ना करने वाले

बनाया है और इस कठिन विषय को बहुत सहजता के साथ पाठक के सामने रख दिया है। पाठक इस उपन्यास को पढ़ते हुए जटिलता के चक्रव्यूह में नहीं उलझता है तथा किसी प्रवाहमय धारा के साथ बहता हुआ चला जाता है। कठिन विषय पर सरल उपन्यास लिख देना लेखक की पहली सफलता है।

'दृश्य से अदृश्य का सफर' की कहानी प्रारंभ तो होती है कोरोना की उस पहली लहर के साथ, जो 2020 में पूरे विश्व में एक साथ आई थी, लेकिन कहानी चूँकि कोरोना की नहीं है कुछ और है, इसलिए बहुत जल्द कहानी कोरोना को छोड़कर अपने मूल विषय पर आ जाती है। सुधा ओम ढींगरा ने अपने पिछले उपन्यास की तरह इसमें भी प्रतीक के रूप में कोरोना का उपयोग किया है, किन्तु उस प्रतीक के माध्यम से बिलकुल अलग कहानी कही है। पिछले उपन्यास में तूफान था इसमें कोरोना है। वह उपन्यास तूफान की कहानी नहीं था, यह भी कोरोना की कहानी नहीं है। लेखक ने केवल टेकऑफ के लिए तूफान या कोरोना का केवल रनवे की तरह उपयोग किया है, एक बार जब कहानी रनवे को छोड़ देती है, तो फिर वह दूसरी दुनिया में पहुँच जाती है। फिर उस रनवे की कोई कहानी नहीं, अब उस आसमान की कहानी है, जिसमें कहानी उड़ रही है। रनवे अंत में आता है जब कहानी वापस आकर लैंड करती है। यह बहुत ही दिलचस्प शैली है कहानी कहने की। किसी प्रतीक को इतनी ख़ूबसूरती के साथ उपयोग करना कि कहानी के मूल विषय के साथ उसका तेल–पानी वाला रिश्ता बना रहे, साथ भी रहें और अलग भी रहें। कहानी असल में घटना नहीं होती है, कहानी का विषय जरूर घटना से आ सकता है। लेकिन; उस विषय का ट्रीटमेंट लेखक किस प्रकार कर रहा है, वह किसी प्रकार उस विषय का उपयोग कर रहा है कि पढ़ते समय पाठक को वही कहानी लगे घटना नहीं लगे। यह उपन्यास इस शैली को समझने का एक अच्छा उदाहरण है कि; किस प्रकार किसी घटना का उपयोग कहानी में किया जाता है।

प्रवासी भारतीयों के लेखन ने हिन्दी में एक नई दुनिया के झरोखे खोलने का काम किया है। यह लेखन भारतीय की दृष्टि से उस देश को देखता है, इसीलिए यह लेखन भारतीय पाठकों के अंदर पैठने में सफल रहता है। 'दृश्य से अदृश्य का सफर' का सफर भी एक ऐसा ही उपन्यास है। यह उपन्यास कहानी तो अमेरिका की कहता है, किन्तु नज़रिया भारत का ही रहता है। कहानी का मुख्य पात्र अमेरिका में बसा हुआ भारतीय है। उस पर विषय ऐसा है, जो दुनिया के हर हिस्से में एक सा ही है। मनोवैज्ञानिक समस्याएँ जिनको हम अज्ञानतावश बीमारी भी कहते हैं। यह उपन्यास उन लोगों को अवश्य पढ़ना चाहिए जो मनोवैज्ञानिक समस्याओं को बीमारी कहते हैं, समझते हैं। यह उपन्यास मनोवैज्ञानिक समस्याओं को देखने के नज़रिये में आमूलचूल परिवर्तन ला देता है। इस उपन्यास को पढ़ने के बाद किसी ऐसे व्यक्ति को देखने का पूरा दृष्टिकोण बदल जाता है। लेखक की एक और सफलता यह है कि यह उपन्यास बहुत अच्छे से समझाता है कि मनोवैज्ञानिक समस्याएँ असल में जीवन में आ रही कुछ बड़ी मुश्किलों, असाधारण घटनाक्रमों तथा इन सबसे उपजे भय का ही परिणाम होती हैं। जब यह भय समाप्त हो जाता है तो समस्याएँ भी समाप्त हो जाती हैं। यह इस उपन्यास का सबसे महत्त्वपूर्ण तथा जरूरी बिन्दु हैं। लेखक ने मनोवैज्ञानिक समस्या से जूझ रहे व्यक्ति के अंदर बैठे भय को परत दर परत खोला है। और न केवल खोला है बल्कि समाधान प्रद तरीक़े से खोला है। साहित्य का कार्य भी तो यही होता है कि वह समस्या तक न रुके बल्कि आगे बढ़े वहाँ तक, जहाँ समस्या का समाधान है।

कहानी भारतीय मूल की डॉ. लता भार्गव के अनुभवों का सहारा लेकर आगे बढ़ती है। डॉ. लता भार्गव जो एक साइकॉलॉजिस्ट हैं तथा फैमिली काउंसलिंग का काम करती हैं। उनके स्मृति कोश में कुछ ऐसे जटिल केस सुरक्षित हैं, जो सबसे चुनौतीपूर्ण केस थे उनके लिए कोरोना के कारण चारों तरफ पसरे हुए लॉकडाउन से जो फुरसत का समय मिला है, उसमें डॉ. लता भार्गव उन केसिज की यादों के गलियारे में जाती हैं, और याद करती हैं उस समय को। कोरोना इस उपन्यास के लिए रनवे का काम करता है, जैसा कि मैंने पहले भी कहा। रनवे इस प्रकार कि कोरोना समय में ही एक पुराना केस फिर से खुलता है। ठीक हो चुके व्यक्ति के जीवन में कोरोना के दहशत भरे समय में समस्याएँ फिर से आ जाती हैं। वह एक बार फिर डॉ. लता भार्गव के संपर्क में आता है और उसके बहाने कहानी कोरोना के धरातल को छोड़कर मनोविज्ञान की दुनिया में पहुँच जाती है। ज़ाहिर सी बात है कि यह जो प्रस्थान है, यह फ्लैशबैक के माध्यम से ही होता है, क्योंकि सारे पुराने केस कहीं यादों की डायरी में सुरक्षित हैं। डॉ. लता भार्गव उस डायरी के पन्ने पलटती जाती हैं और पाठक रूबरू होता रहता है उन गहरी अँधेरी सुरंगों से, जिन्हें मनोवैज्ञानिक सम्स्याएँ कहा जाता है।

इस उपन्यास में डॉ. लता भार्गव के तीन पुराने केसिज की मदद से मनोविज्ञान की जटिल पहेली को बहुत सरल तरीके से पाठकों के सामने प्रस्तुत किया गया है। पहला केस डॉली पार्टन है, दूसरा सायरा का है तथा तीसरा अनाम महिला का है। पहले दोनों नाम भी असल नाम नहीं है बल्कि डॉ. लता भार्गव द्वारा इन महिलाओं की विशेषताओं के आधार पर दिए गए नाम हैं। पहली का चेहरा–मोहरा मशहूर अमेरिकन गायिका डॉली पार्टन से मिलता है, इसलिए उसे